10. पाजेब

जैनेन्द्र कुमार

लेखक परिचय

प्रेमचंद ने जैनेन्द्र को हिन्दी का गोर्की कहा था। प्रेमचंद द्वारा की गई उनकी इस आरंभिक प्रशंसा को सनद के रूप में इस्तेमान नहीं किया जा सकता। प्रेमचंद द्वारा की गई जैनेन्द्र की प्रशंसा एक उदीयमान एवं संभावनाशील लेखक का स्वाभाविक उत्साह-वर्द्धन हो सकता है। प्रेमचंद के मन में राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन एवं उसके नेताओं के प्रति गहरा लगाव था। जेल जाने को वे हसरत भरी निगाह से देखते थे। जैनेन्द्र अपनी पढ़ाई छोड़कर स्वाधीनता आंदोलन में सक्रिय हो गए और कई बार जेल भी जा चुके थे। जैनेन्द्र की क्रांतिकारी पृष्ठभूमि वाली कहानियों एवं उनकी जेलयात्रा ने प्रेमचद को काफी प्रभावित किया, उनके मन में एक युवा लेखक के प्रति समादर का भाव जागृत हुआ। प्रेमचंद ने इसी भावभूमि पर चढ़कर जैनेन्द्र की प्रशंसा की थी। तब उनके सामने जैनेन्द्र का परवर्ती साहित्य नहीं था। जैनेन्द्र ने प्रेमचंद के निकट सम्पर्क में रहते हुए भी अपने लिए एक अलग रास्ते की तलाश की जो प्रेमचंद से भिन्न था।

जैनेन्द्र कुमार की कहानियों का पहला संग्रह सन् 1929 में 'फाँसी' नाम से प्रकाशित हुआ था। इन कहानियों में अपने आसपास के जीवन-यथार्थ को आधार बनाया गया है। इनमें विचारों की प्रधानता है। इसी काल में लिखी गई जैनेन्द्र की और भी कहानियाँ हैं जो तत्कालीन राजनीतिक संदर्भों को सीधे छूने के बावजूद लगभग वही काम करती है जैसा कभी प्रेमचंद की 'सोजे वतन' की कहानियों ने किया था। यशपाल और जैनेन्द्र दोनों की कहानियाँ विचार प्रधान हैं। नई कहानी के लेखकों ने विचार की इस सत्ता को एक पठार के रूप में देखा जो लेखक और वास्तविक जीवन के बीच अवरोध पैदा करता है। जैनेन्द्र कहानी में जीवन की वास्तविकता का लगभग तिरस्कार करके आगे बढ़ जाते हैं। 'पाजेब' कहानी में जीवन की एक छोटी-सी घटना को उठाया गया है। पाजेब सबसे पहले बच्चे के मन में इच्छा के रूप में उभरता है। कहानी के अंत में यही पाजेब मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ को प्रतिबिम्बित करता है। पाजेब तो एक प्रतीक मात्र है। यह निम्नमध्यवर्ग की इच्छा आकांक्षा का प्रतीक है। वस्तुओं के प्रति ललक की अतिशयता इस कहानी में देखी जा सकती है। मध्यवर्ग की उद्दाम लालसाएँ, अविश्वास और मिथ्याचार इस कहानी में प्रकट हो गया है।

जैनेन्द्र कुमार की कहानियाँ व्यक्ति के अंतजर्गत् का बड़ी बारीकी से अध्ययन करती हैं। 'पाजेब' इसका अपवाद नहीं है। यहाँ भी 'पाजेब' का खो जाना यथार्थ के कई सारे पहलुओं

को उद्घाटित कर देता है। पाजेब खो जाने के बाद आशुतोष से पूछताछ की जाती है। माँ-बाप उससे तरह-तरह के सवाल करते हैं। इन सवालों में ही मध्यवर्गीय चरित्र का यथार्थ झलक उठता है। छोटी-छोटी चीजों के प्रति इतनी आसक्ति और दूसरों के प्रति अविश्वास इस वर्ग की स्थायी पहचान है। यहाँ वस्तु की कीमत व्यक्ति से ज्यादा आँकी जाती है। तभी तो दुनियादारी से अनजान बच्चे के साथ लगभग वैसा ही व्यवहार किया जाता है जैसा कि चोरी के आरोप में पकड़े गए किसी आदमी के साथ। आशुतोष द्वारा कोई जवाब न दिए जाने के कारण उत्पन्न झुंझलाहट और घर के अंदर उसे बंद करने की तमाम कोशिशें इस कहानी को ऐसे मोड़ देती हैं जिससे इसका उद्देश्य अपने आप प्रकट हो जाता है। आशुतोष की चुप्पी में ही उसके पिता का मध्यवर्गीय चरित्र उभरकर सामने आ जाता है। पाजेब की जानकारी हासिल करने के लिए कभी वह आशुतोष को पुचकारता है, प्रलोभन देता है और कभी उसे यातना देता है। जो व्यक्ति अपने पुत्र के साथ इस तरह का व्यवहार करता है वह दूसरों के साथ कैसा बर्ताव करेगा, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। पाजेब के माध्यम से लेखक मध्यवर्ग की संकीर्णता, अवसरवादिता, ढुलमुलपन, लालच और खोखलेपन को दिखाना चाहता है। कलात्मक दृष्टि से भी यह कहानी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसके अलावा खेल, पत्नी, जान्हवी, फोटोग्राफी, नीलम देश की राजकन्या, लाल सरोवर, दो चिड़ियाँ, घुंघरू, भाभी, ग्रामोफोन का रिकार्ड और दृष्टिदोष जैनेन्द्र की महत्वपूर्ण कहानियाँ हैं।

कांग्रेस और स्वाधीनता आंदोलन में वर्ग-भेद की आलोचना करने वाली कहानी है- 'एक कैदी'। जैनेन्द्र कुमार सन् 1920 और 30 के आंदोलनों के बीच घटित मूलभूत अंतर को स्वीकार करते हैं और मानते हैं कि सन् 1920 के आंदोलन में जहाँ चरित्र पर अधिक बल दिया गया और नेता तथा जनता के बीच कोई स्पष्ट विभाजन नहीं था, वहाँ 1930 के आंदोलन में राजनैतिक कैदियों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति कहीं ज्यादा मायने रखती थी। कुछ नेता इस सुविधा के प्रति अधिक सचेत थे। 'एक कैदी' इसी पृष्ठभूमि पर लिखी गई कहानी है जहाँ लेखक ने एक महान् उद्देश्य को लेकर किए जा रहे संघर्ष में व्यक्ति के अंतर्विरोध को उजागर करने का प्रयास किया है।

जहाँ तक साहित्य की सोद्देश्यता का सवाल है, प्रेमचंद की उस चिंतन धारा को जैनेन्द्र कुमार ने लगभग छोड़ ही दिया। हाँ, यशपाल ने प्रेमचंद की उस सामाजिकता को अपने साहित्य द्वारा आगे बढ़ाया। जैनेन्द्र ने तो आम तौर पर वास्तविक अनुभव संस्कार का बहुत कम उपयोग किया। विचार को आधार बनाकर कहानी गढ़ने और बनाने की प्रवत्ति ने उन्हें किसी व्यवस्थित एवं तार्किक रचना-दृष्टि अर्जित नहीं करने दिया परन्तु उनकी वैचारिक एकरूपता

उन्हें भटकाव से बचाती है। जैनेन्द्र ने वास्तविक और यथार्थ जीवन की उपेक्षा अमूर्त जीवन में गहरी रूचि ली है। उनकी कहानियों में आई बौद्धिक समस्याएँ ठोस जीवन से मेल नहीं खातीं, जिसके कारण वे जीवन के वैविध्य को अभिव्यक्त नहीं कर सके।

कहानी

बाजार में एक नई तरह की पाजेब चली है। पैरों में पड़कर वे बड़ी अच्छी मालूम होती हैं। उनकी कड़ियाँ आपस में लचक के साथ जुड़ी रहती हैं कि पाजेब का मानो निज का आकार कुछ नहीं है, जिस पाँव में पड़े उसी के अनुकूल हो रहती हैं।

पास-पड़ोस में तो सब नन्हीं-बड़ी के पैरों में आप वही पाजेब देख लीजिए। एक ने पहनी कि फिर दूसरी ने भी पहनी। देख-देखी में इस तरह उनका न पहनना मुश्किल हो गया है।

हमारी मुन्नी ने भी कहा बाबूजी, हम पाजेब पहनेंगे। बोलिए भला कठिनाई से चार बरस की उम्र और पाजेब पहनेगी।

मैंने कहा कि कैसी पाजेब?

बोली कि हाँ, वही जैसे रुकमन पहनती है, जैसी सीला पहनती है।

मैंने कहा कि अच्छा-अच्छा।

बोली कि मैं तो आज ही मंगा लूँगी।

मैंने कहा कि अच्छा भाई आज ही सही।

उस वक्त तो खैर मुन्नी किसी काम में बहल गई। लेकिन जब दोपहर आई मुन्नी की बुआ, तब वह मुन्नी सहज मानने वाली न थी।

बूआ ने मुन्नी को मिठाई खिलाई और गोद में लिया और कहा कि अच्छा, तो तेरी पाजेब अब के इतवार को जरूर लेती आऊँगी।

इतवार को बूआ आई और पाजेब ले आई। मुन्नी उन्हें पहनकर खुशी के मारे यहाँ-से-वहाँ छुमकती फिरी। रुकमिन के पास गई और कहा-देख रुकमिन, मेरी पाजेब। शीला को भी अपनी पाजेब दिखाई। सब ने पाजेब पहनी देखकर उसे प्यार किया और तारीफ की। सचमुच वह चाँदी की सफेद दो-तीन लड़ियाँ-सी टखनों के चारों ओर लिपट कर, चुपचाप बिछी हुई, ऐसी सुघड़ लगती थी कि बहुत ही, और बच्ची की खुशी का ठिकाना न था।

और हमारे महाशय आशुतोष, जो मुन्नी के बड़े भाई थे, पहले तो मुन्नी को सजी-वजी देखकर बड़े खुश हुए। वह हाथ पकड़कर अपनी बढ़िया मुन्नी को पाजेब-सहित दिखाने के लिए आस-पास ले गये। मुन्नी की पाजेब का गौरव उन्हें अपना भी मालूम होता था। वह खूब

हँसे और ताली पीटी, लेकिन थोड़ी देर बाद वह ठुमकने लगे कि मुन्नी को पाजेब दी, सो हम भी बाईसिकिल लेंगे।

बूआ ने कहा कि अच्छा बेटा अब के जन्म-दिन को तुझे भी बाईसिकिल दिलवाएँगे।

आशुतोष बाबू ने कहा कि हम तो अभी लेंगे।

बूआ ने कहा, "छी-छी तू कोई लड़की है? जिद तो लड़कियाँ किया करती हैं और लड़कियाँ रोती हैं। कहीं बाबू साहब लोग रोते हैं!"

आशूतोष बाबू ने कहा कि तो हम बाईसिकिल जरूर लेंगे जन्म-दिन वाले रोज।

बूआ ने कहा कि हाँ, यह बात पक्की रही, जन्म दिन पर तुमको बाईसिकिल मिलेगी।

इस तरह वह इतवार का दिन हँसी-खुशी पूरा हुआ। शाम होने पर बच्चों की बूआ चली गई। पाजेब का शौक घड़ीभर का था। वह फिर उतार कर रख-रखा दी गई जिससे कहीं खो न जाए। पाजेब वह बारीक और सुबुक काम की थी और खासे दाम लग गए थे।

श्रीमती ने हमसे कहा कि क्यों जी, लगती तो अच्छी है, मैं भी एक बनवा लूं।

मैंने कहा कि क्यों न बनवाओ ! तुम कौन चार बरस की नहीं हो।

खैर, यह हुआ। पर मैं रात को अपनी मेज पर था कि श्रीमती ने आकर कहा कि तुमने पाजेब तो नहीं देखी?

मैंने आश्चर्य से कहा कि क्या मतलब?

बोली कि देखो, यहाँ मेज-वेज पर तो नहीं है। एक तो उसमें की है, पर दूसरे पैर की मिलती नहीं है। जाने कहाँ गई?

मैंने कहा कि जायगी कहाँ? यहीं कहीं देख लो। मिल जायगी।

उन्होंने मेरे मेज के कागज उठाने-धरने शुरु किये और अलमारी की किताबें टटोल डालने का भी मनसूबा दिखाया।

मैंने कहा कि यह क्या कर रही हो? यहाँ वह कहाँ से आई?

जवाब में वह मुझी से पूछने लगी कि तो फिर कहाँ है?

मैंने कहा कि तुमने ही तो रक्खी होगी। कहाँ रक्खी थी?

बतलाने लगी कि मैंने दोपहर के बाद कोई दो बजे उतार कर दोनों को अच्छी तरह सम्भाल कर उसके नीचे वाले बक्स में रख दी थीं। अब देखा तो एक है, दूसरी गायब है।

मैंने कहा कि तो चलकर वह इस कमरे में कैसे आ जायेगी? भूल हो गई होगी। एक रक्खी होगी, एक वहीं-कहीं फर्श पर छूट गई होगी। देखो मिल जायेगी। कहीं जा नहीं सकती।

इस पर श्रीमती कहा-सुनी करने लगीं कि तुम तो ऐसे ही हो। खुद लापरवाह हो, दोष उल्टे मुझे देते हो। कह तो रही हूँ कि मैंने दोनों सँभाल कर रखी थीं।

मैंने कहा कि सम्भाल कर रखी थीं, तो फिर यहाँ-वहाँ क्यों देख रही हो? जहाँ रक्खी थीं वहीं से ले लो न। वहाँ नहीं है तो फिर किसी ने निकाली ही होगी।

श्रीमती बोलीं कि मेरा भी यही ख्याल हो रहा है। हो न हो, बंसी नौकर ने निकाली है। मैंने रक्खी, तब वह वहाँ मौजूद भी था।

मैंने कहा कि तो उससे पूछा?

बोलीं कि वह तो साफ़ इन्कार करता है।

मैंने कहा तो फिर?

श्रीमती जोर से बोलीं कि तो फिर मैं क्या बताऊँ? तुम्हें तो किसी बात की फिकर है नहीं, डाँट कर कहते क्यों नहीं हो, उस बंसी को बुलाकर? ज़रूर पाजेब उसी ने ली है?

मैंने कहा कि अच्छा, तो उसे क्या कहना होगा? यह कहूँ कि ला भाई पाजेब दे दे!

श्रीमती झल्ला कर बोलीं कि हो चुका बस कुछ तुमसे। तुम्हीं ने तो उस नौकर की जात को शहज़ोर बना रखा है। डाट न फटकार, नौकर ऐसे सिर न चढ़ेगा तो क्या होगा।

बोलीं कि कह तो रही हूँ कि किसी ने उसे बक्स में से निकाला ही है। और सोलह में पन्द्रह आने यह बंसी है। सुनते हो न वही है।

मैंने कहा कि मैंने बंसी से पूछा था। उसने नहीं ली मालूम होती।

इस पर श्रीमती ने कहा कि तुम नौकरों को नहीं जानते। वे बड़े छँटे होते हैं। जरूर बंसी ही चोर है। नहीं तो क्या फरिश्ते लेने आते।

मैंने कहा कि तुमने आशुतोष से भी पूछा?

बोली पूछा था। वह तो खुद ट्रंक और बक्स के नीचे घुस-घुसकर खोज लगाने में मेरी मदद करता रहा है। वह नहीं ले सकता।

मैंने कहा उसे पतंग का बड़ा शौक है।

बोली कि तुम तो उसे बताते-बरजते कुछ हो नहीं। उमर होती जा रही है। वह यों ही रह जाएगा। तुम्हीं हो उसे पंतग की शह देने वाले।

मैंने कहा कि जो कहीं पाजेब ही पड़ी मिल गई हो तो?

बोली कि नहीं, नहीं, नहीं ! मिलती तो वह बता न देता?

खैर, बातों-बातों में मालूम हुआ कि उस शाम आशुतोष पतंग और एक डोर का पिन्ना नया लाया है।

श्रीमती ने कहा कि यह तुम्हीं हो जिसने पतंग की उसे इजाजत दी। बस सारे दिन पतंग-पतंग। यह नहीं कि कभी उसे बिठाकर सबक की भी कोई बात पूछो। मैं सोचती हूँ कि एक दिन तोड़-ताड़ दूँ उसकी सब डोर और पतंग। हाँ तो सारे वक्त वही धुन!

मैंने कहा कि खैर; छोड़ो। कल सबेरे पूछ-ताछ करेंगे।

सबेरे बुला कर मैंने गम्भीरता से उससे पूछा कि क्यों बेटा, एक पाजेब नहीं मिल रही है, तुमने तो नहीं देखी?

वह गुम हो आया। जैसे नाराज़ हो। उसने सिर हिलाया कि उसने नहीं ली। पर मुँह नहीं खोला।

मैंने कहा कि देखो बेटे, ली हो तो कोई बात नहीं, सच कह देना चाहिए।

उसका मुँह और भी फूल आया। और वह गुम-सुम बैठ रहा।

मेरे मन में उस समय तरह-तरह के सिद्धान्त आए। मैंने स्थिर किया कि अपराध के प्रति कठोर ही होनी चाहिए। रोष का अधिकार नहीं है। प्रेम से ही अपराध-वृत्ति को जीता जा सकता है। आतंक से उसे दबाना ठीक नहीं है। बालक का स्वभाव कोमल होता है और सदा ही उससे स्नेह से व्यवहार करना चाहिए इत्यादि।

मैंने कहा कि बेटा आशुतोष तुम घबराओ नहीं। सच कहने में घबराना नहीं चाहिए।

ली हो तो खुल कर कह दो बेटा! हम कोई सच कहने की सजा थोड़े ही दे सकते हैं! बल्कि सच बोलने पर तो इनाम मिला करता है।

आशुतोष सब सुनता हुआ बैठा रह गया। उसका मुँह सूजा था। वह सामने मेरी आँखों में नहीं देख रहा था। रह-रहकर उसके माथे पर बल पड़ते थे।

"क्यों बेटे, तुमने ली तो नहीं?"

उसने सिर हिला कर क्रोध से अस्थिर और तेज आवाज में कहा कि मैंने नहीं ली, नहीं ली, नहीं ली। यह कहकर वह रोने-का हो आया, पर रोया नहीं। आँखों में आँसू रोक लिए।

उस वक्त मुझे प्रतीत हुआ उग्रता दोष का लक्षण है।

मैंने कहा देखो बेटा, डरो नहीं; अच्छा जाओ। ढूँढो; शायद कहीं पड़ी हुई वह पाजेब मिल जाय। मिल जायगी तो हम तुम्हें इनाम देंगे।

वह चला गया और दूसरे कमरे में जाकर पहले तो एक कोने में खड़ा हो गया। कुछ देर चुपचाप खड़े रहकर वह फिर यहाँ-वहाँ पाजेब की तलाश में लग गया।

श्रीमती आकर बोलीं आशू से तुमने पूछा लिया? क्या ख्याल है?

मैंने कहा कि सन्देह तो मुझे होता है। नौकर का काम तो यह है नहीं।

श्रीमती ने कहा कि नहीं जी, आशू भला क्यों लेगा?

मैं कुछ बोला नहीं। मेरा मन जाने कैसे गम्भीर प्रेम के भ्रम से आशुतोष के प्रति उमड़ रहा था। मुझे ऐसा मालूम होता था कि ठीक इस समय आशुतोष को हमें अपनी सहानुभूति से वंचित नहीं करना चाहिए। बल्कि कुछ अतिरिक्त स्नेह इस समय बालक को मिलना चाहिए। मुझे यह एक भारी दुर्घटना मालूम होती थी। मालूम होता था कि अगर आशुतोष ने चोरी की है तो उसका इतना दोष नहीं है; बल्कि यह हमारे ऊपर बड़ा भारी इल्ज़ाम है। बच्चे में चोरी की आदत भयावह हो सकती है। लेकिन बच्चे के लिए वैसी लाचारी उपस्थित हो आई, यह और भी कहीं भयावह है। यह हमारी आलोचना है। हम उस चोरी से बरी नहीं हो सकते।

"मैंने बुलाकर कहा, "अच्छा सुनो। देखो, मेरी तरफ देखो, यह बताओ कि पाजेब तुमने छुन्नू को दी है न?"

वह कुछ देर कुछ नहीं बोला। उसके चेहरे पर रंग आया और गया। मैं एक-एक छाया ताड़ना चाहता था।

मैंने आश्वासन देते हुए कहा कि कोई बात नहीं। हाँ-हाँ, बोलो डरो नहीं। ठीक बताओ बेटे? कैसा हमारा सच्चा बेटा है।

मानो बड़ी कठिनाई के बाद उसने अपना सिर हिलाया।

मैंने बहुत खुश होकर कहा कि दी है न छुन्नू को?

उसने सिर हिला दिया।

अत्यन्त सांत्वना के स्वर में स्नेहपूर्वक मैंने कहा कि मुँह से बोलो। छुन्नू को दी है?

उसने कहा, "हाँ-आँ।"

मैंने अत्यन्त हर्ष के साथ दोनों बाँहों में लेकर उसे उठा लिया। कहा कि ऐसे ही बोल दिया करते हैं अच्छे लड़के। आशू हमारा राजा बेटा है। गर्व के भाव से उसे गोद में लिये-लिये मैं उसकी माँ की तरफ गया। उल्लासपूर्वक बोला कि देखो हमारे बेटे ने सच कबूल किया हैं। पाजेब उसने छुन्नू को दी है।

सुनकर माँ उसकी खुश हो आई। उन्होंने उसे चूमा। बहुत शाबाशी दी और उसकी बलैयाँ लेने लगीं।

आशुतोष भी मुस्करा आया अगरचे एक उदासी भी उसके चेहरे से दूर नहीं हुई थी।

उसके बाद अलग ले जाकर मैंने उससे बड़े प्रेम से पूछा कि पाजेब छुन्नू के पास है न? जाओ माँग ला सकते हो उससे?

आशुतोष मेरी ओर देखता हुआ बैठा रह गया। मैंने कहा कि जाओ बेटे। ले आओ।

उसने जवाब में मुँह नहीं खोला।

मैंने आग्रह किया तो वह बोला कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो वह कहाँ से देगा।

मैंने कहा कि तो जिसको उसने दी होगी उसका नाम बता देगा। सुनकर वह चुप हो गया। मेरे बार-बार कहने पर वह यही कहता रहा कि पाजेब छुन्नू के पास न हुई तो वह देगा कहाँ से?

अन्त में हारकर मैंने कहा कि वह कहीं तो होगी। अच्छा तुमने कहाँ से उठाई थी?

"पड़ी मिली थी।"

"और फिर नीचे जाकर वह तुमने छुन्नू को दिखाई?''

"हाँ!''

"फिर उसने कहा कि इसे बेचेंगे?''

"हाँ!''

"कहाँ बेचने को कहा?''

"कहा मिठाई लाएँगे।''

"नहीं पतग लायँगे।''

"अच्छा पतंग को कहा ?''

"हाँ !''

"सो पाजेब छुन्नू के पास रह गई?''

"हाँ !''

"तो उसीके पास होनी चाहिए न? या पतंग वाले के पास होगी। जाओ बेटा उससे ले आओ। कहना हमारे बाबूजी तुम्हें इनाम देंगे।''

वह जाना नहीं चाहता था। उसने फिर कहा कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो कहाँ से देगा?

मुझे उसकी जिद बुरी मालूम हुई। मैंने कहा कि तो कहीं तुमने उसे गाड़ दिया है? क्या किया है? बोलते क्यों नहीं?

वह मेरी ओर देखता रहा और कुछ नहीं बोला।

मैंने कहा कुछ कहते क्यों नहीं?

वह गुम-सुम रह गया। और नहीं बोला।

मैंने डपटकर कहा कि जाओ, जहाँ हो वहीं से पाजेब लेकर आओ।

जब वह अपनी जगह से नहीं उठा और नहीं गया तो मैंने उसे कान पकड़कर उठाया। कहा कि सुनते हो? जाओ पाजेब लेकर आओ। नहीं तो घर में तुम्हारा काम नहीं है।

उस तरह उठाया जाकर वह उठ गया और कमरे से बाहर निकल गया। निकलकर बरामदे के एक कोने में रूठा मुँह बनाकर खड़ा रह गया।

मुझे बड़ा क्षोभ हो रहा था। यह लड़का सच बोलकर अब किस बात से घबरा रहा है, यह मैं कुछ समझ न सका। मैंने बाहर आकर जरा धीरे से कहा कि जाओ भाई, जाकर छुन्नू से कहते क्यों नहीं हो?

पहले तो उसने कोई जवाब नहीं दिया और जवाब दिया तो बार-बार कहने लगा कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो वह कहाँ से देगा?

मैंने कहा कि जितने में उसने बेची होगी वह दाम दे देंगे। समझे न जाओ, तुम कहो तो।

छुन्नू की माँ तो कह रही है कि उसका लड़का ऐसा काम नहीं कर सकता। उसने पाजेब नहीं देखी।

जिस पर आशुतोष की माँ ने कहा कि नहीं तुम्हारा छुन्नू झूठ बोलता है। क्यों रे आशुतोष तैने दी थी न?

आशुतोष ने धीरे से कहा कि हाँ दी थी।

दूसरी ओर से छुन्नू बढ़कर आया और हाथ फटकारकर बोला कि मुझे नहीं दी। क्यों रे मुझे कब दी थी?

आशुतोष ने जिद बाँधकर कहा कि दी तो थी। कह दो नहीं दी थी?

नतीजा यह हुआ कि छुन्नू की माँ ने छुन्नू को खूब पीटा और खुद भी रोने लगी। कहती जातीं कि हाय रे, अब हम चोर हो गये। यह कुलच्छिनी औलाद जाने कब मिटेगी?

बात दूर तक फैल चली। पड़ोस की स्त्रियों में पवन पड़ने लगी। और श्रीमती ने घर लौटकर कहा कि छुन्नू और उसकी माँ दोनों एक-से हैं।

मैंने कहा कि तुमने तेजा-तेजी क्यों कर डाली? ऐसे कोई बात भला कभी सुलझती है!

बोली कि हाँ मैं तेज बोलती हूँ। अब जाओ ना, तुम्हीं उनके पास से पाजेब निकालकर लाते क्यों नहीं? तब जानूं जब पाजेब निकलवा दो।

मैंने कहा कि पाजेब से बढ़कर शान्ति है। और अशान्ति से तो पाजेब मिल नहीं जायगी।

श्रीमती बुदबुदाती हुई नाराज होकर मेरे सामने से चली गई

थोड़ी देर बाद छुन्नू की माँ हमारे घर आई। श्रीमती उन्हें लाई थीं। अब उनके बीच गर्मी नहीं थी, उन्होंने मेरे सामने आकर कहा कि छुन्नू तो पाजेब के लिए इनकार करता है। वह पाजेब कितने की थी मैं उसके दाम भर सकती हूँ।

मैंने कहा, "यह आप क्या कहती हैं। बच्चे बच्चे हैं। आपने छुन्नू से सहूलियत से पूछा भी?"

उन्होंने उसी समय छुन्नू को बुलाकर मेरे सामने कर दिया। कहा कि क्यों रे, बता क्यों नहीं देता जो तैने पाजेब देखी हो?

छुन्नू ने जोर से सिर हिलाकर इनकार किया। और बताया कि पाजेब आशुतोष के हाथ में मैंने देखी थी और वह पतंग वाले को दे आया है। मैंने खूब देखी थी, वह चाँदी की थी।

"तुम्हें ठीक मालूम है?"

"हाँ, वह मुझसे कह रहा था कि तू भी चल। पतंग लाएँगे।"

"पाजेब कितनी बड़ी थी? बताओ तो।"

छुन्नू ने उसका आकार बताया। जो ठीक ही था।

मैंने उसकी माँ की तरफ देखकर कहा कि देखिए न पहले यही कहता था कि मैंने पाजेब देखी तक नहीं। अब कहता है कि देखी है।

माँ ने मेरे सामने छून्नू को खींचकर तभी धम्म-धम्म पीटना शुरू कर दिया। कहा कि क्यों रे, झूठ बोलता है? तेरी चमड़ी न उधेड़ी तो मैं नहीं।

मैंने बीच-बचाव करके छुन्नू को बचाया। वह शहीद की भाँति पिटता रहा था। रोया बिल्कुल नहीं था और एक कोने में खड़े आशुतोष को जाने किस भाव से वह देख रहा था।

खैर, मैंने सबको छुट्टी दी। कहा कि जाओ बेटा छुन्नू, खेलो। उसकी माँ को कहा कि आप उसे मारियेगा नहीं। और पाजेब कोई ऐसी बड़ी चीज़ नहीं है।

छुन्नू चला गया। तब, उसकी माँ ने पूछा कि आप उसे कसूरवार समझते हो?

मैंने कहा कि मालूम तो होता है कि उसे कुछ पता है। और वह मामले में शामिल है।

इस पर छुन्नू की माँ के पास बैठी हुई मेरी पत्नी से कहा, "चलो बहनजी मैं तुम्हें अपना सारा घर दिखाए देती हूँ। एक-एक चीज़ देख लो। होगी पाजेब तो जाएगी कहाँ?"

मैंने कहा, "छोड़िए भी। बेबात की बात बढ़ाने से क्या फायदा।" सो ज्यों-त्यों मैंने उन्हें दिलासा दिया। नहीं तो वह छुन्नू को पीट-पाट हाल-बेहाल कर डालने का प्रण हो उठाये ले रही थी। कुलच्छनी, आज उसी धरती में नहीं गाड़ दिया, तो मेरा नाम नहीं।

खैर, जिस-जिस भाँति बखेड़ा टाला। मैं इस झंझट में दफ्तर भी समय पर नहीं जा सका। जाते वक्त श्रीमती को कह गया कि देखो आशुतोष को धमकाना मत। प्यार से सारी बातें पूछना। धमकाने से बच्चे बिगड़ जाते हैं, और हाथ कुछ नहीं आता। समझी न?

शाम को दफ्तर से लौटा तो श्रीमती ने सूचना दी कि आशुतोष ने सब बतला दिया है। ग्यारह आने पैसे में वह पाजेब पतंग वाले को दे दी है। पैसे उसने थोड़े-थोड़े करके देने को कहे हैं। पाँच आने जो दिये वह छुन्नू के पास हैं। इस तरह रत्ती-रत्ती बात उसने कह दी है।

कहने लगीं कि मैंने बड़े प्यार से पूछ-पूछकर यह सब उसके पेट में से निकाला है। दो-तीन घंटे मैं मग़ज मारती रही। हाय राम, बच्चे का भी क्या जी होता हे।

मैं सुनकर खुश हुआ। मैंने कहा कि चलो अच्छा है, अब पाँच आने भेज कर पाजेब मंगा लेंगे। लेकिन यह पतंग-वाला भी कितना बदमाश है, बच्चों के हाथ से ऐसी चीज़े लेता है। उसे पुलिस में दे देना चाहिए। उचक्का कहीं का !

फिर मैंने पूछा कि आशुतोष कहाँ है?

उन्होंने बताया कि बाहर ही कहीं खेल-खाल रहा होगा।

मैंने कहा कि बंसी,जाकर उसे बुला तो लाओ।

बंसी गया और उसने आकर कहा कि वह अभी आते हैं।

"क्या कर रहा है?"

"छुन्नू के साथ गिल्ली-डण्डा खेल रहे हैं।"

थोड़ी देर में आशुतोष आया। तब मैंने उसे गोद में लेकर प्यार किया। आते-आते उसका चेहरा उदास हो गया था और गोद में लेने पर भी वह विशेष प्रसन्न नहीं मालूम हुआ।

उसकी माँ ने खुश होकर कहा कि हमारे आशुतोष ने सब बातें अपने-आप पूरी पूरी बता दी है। हमारा आशुतोष बड़ा सच्चा लड़का है।

आशुतोष मेरी गोद में टिका रहा। लेकिन अपनी बड़ाई सुनकर भी उसको कुछ हर्ष नहीं हुआ प्रतीत होता था।

मैंने कहा कि आओ चलो। अब क्या बात है। [illegible] तुमको, पाँच ही आन[illegible]मिलते हैं न? हम से पाँच आने मांग लेते तो क्या हम न देते? सुना अब से ऐसा मत करना बेटे!

कमरे में ले जाकर मैंने उससे फिर पूछताछ की, "क्यों बेटा पतंग वाले ने पाँच आने तुम्हें दिये न?'

"हाँ!''

"और वह छुन्नू के पास हैं?''

"हाँ!''

"अभी तो उसके पास होंगे न?''

"नहीं।''

"खर्च कर दिए?''

"नहीं।''

"नहीं खर्च किये?''

"हाँ।''

"खर्च किये, कि नहीं खर्च किए?''

उस ओर से प्रश्न करने पर वह मेरी ओर देखता रहा, उत्तर नहीं दिया।

"बताओ खर्च कर दिये कि अभी हैं?''

जवाब में उसने एक बार 'हाँ' कहा तो दूसरी बार 'नहीं' कहा।

मैंने कहा कि तो यह क्यों नहीं कहते कि तुम्हें नहीं मालूम है?

"हाँ।''

"बेटा मालूम है न?''

"हाँ।''

"पतंग वाले से पैसे छुन्नू ने लिए हैं न?''

"हाँ।''

"तुमने क्यों नहीं लिये?''

वह चुप।

"पाँचों इकन्नी थीं, या दुअन्नी और पैसे भी थे?''

वह चुप।

"बतलाते क्यों नहीं हो?''

चुप !

"इकन्नियाँ कितनी थीं, बोलो?''

"दो।''

"बाकी पैसे थे?''

"हाँ''

"दुअन्नी नहीं थी?''

"हाँ''

"दुअन्नी थी?''

"हाँ''

"दुअन्नी थी?''

"हाँ''

मुझे क्रोध आने लगा। डपटकर कहा कि सच क्यों नहीं बोलते जी? सच बताओ कितनी इकन्नियाँ थीं और कितना क्या था?

वह गुम-सुम खड़ा रहा, कुछ नहीं बोला।

"बोलते क्यों नहीं?''

वह नहीं बोला।

"सुनते हो! बोलो-नहीं तो-''

आशुतोष डर गया। और कुछ नहीं बोला।

"सुनते नहीं मैं क्या कह रहा हूँ?''

इस बार भी वह नहीं बोला तो मैंने पकड़कर उसके कान खींच लिए। वह बिना आँसू लाये गुम-सुम खड़ा रहा।

"अब भी नहीं बोलोगे?''

वह डरके मारे पीला हो आया।लेकिन बोल नहीं सका। मैंने ज़ोर से बुलाया, "बंसी यहाँ आओ, इसको ले जाकर कोठरी में बन्द कर दो।''

बंसी नौकर उसे उठाकर ले गया और कोठरी में मूंद दिया।

दस मिनट बाद मैंने फिर उसे पास बुलवाया। उसका मुँह सूजा हुआ था। बिना कुछ बोले उसके ओंठ हिल रहे थे। कोठरी में बंद होकर भी वह रोया नहीं।

मैंने कहा, क्यों रे, अब तो अकल आई?

वह सुनता हुआ गुम-सुम खड़ा रहा।

"अच्छा, पतंग-वाला कौन सा है? दाईं तरफ का वह चौराहे वाला?'' उसने कुछ ओंठों में ही बड़बड़ा दिया। जिसे मैं कुछ न समझ सका।

"वह चौराहे वाला? बोलो -''

"हाँ''

"देखो अपने चाचा के साथ चले जाओ। बता देना कि कौन सा है। फिर उसे स्वयं भुगत लेंगे। समझते हो न?''

यह कहकर मैंने अपने भाई को बुलवाया। सब बात समझाकर कहा, 'देखो पाँच आने के पैसे ले जाओ। पहले तुम दूर रहना। आशुतोष पैसे ले जाकर उसे देगा और अपनी पाजेब माँगेगा। अव्वल तो वह पाजेब लौटा ही देगा। नहीं तो उसे डाँटना और कहना कि तुझे पुलिस के सुपुर्द कर दूँगा। बच्चों से माल ठगता है? समझे? नरमी की जरूरत नहीं है।''

"और आशुतोष अब जाओ अपने चाचा के साथ जाओ।'' वह अपनी जगह पर खड़ा था। सुनकर भी टस-से-मस होता दिखाई नहीं दिया।

"नहीं जाओगे?''

उसने सिर हिला दिया कि नहीं जाऊँगा।

मैंने तब उसे समझाकर कहा कि भैया घर की चीज़ है, दाम लगे हैं। भला पाँच आने में रुपयों का माल किसी के हाथ खो दोगे। जाओ चाचा के संग जाओ। तुम्हें कुछ नहीं कहना होगा। हाँ पैसे दे देना और अपनी चीज वापस माँग लेना। दे दे, नहीं दे नहीं दे। तुम्हारा इससे सरोकार नहीं। सच है न बेटे! अब जाओ।

पर वह जाने को तैयार ही नहीं दीखा। मुझे लड़के की गुस्ताखी पर बड़ा बुरा मालूम हुआ। बोलो इसमें बात क्या है। इसमें मुश्किल कहाँ है? समझाकर बात कर रहे हैं सो समझता ही नहीं, सुनता ही नहीं।

मैंने कहा कि क्यों रे नहीं जाएगा ?

उसने फिर सिर हिला दिया कि नहीं जाऊँगा।

मैंने प्रकाश, अपने छोटे भाई को बुलाया। कहा, "प्रकाश इसे पकड़ कर ले जाओ।"

प्रकाश ने उसे पकड़ा और आशुतोष अपने हाथ-पैरों से उसका प्रतिकार करने लगा। वह साथ जाना नहीं चाहता था।

मैंने अपने ऊपर बहुत जब्र करके फिर आशुतोष को पुचकारा, कहा कि जाओ भाई ! डरो नहीं। अपनी चीज़ घर में आयगी। इतनी-सी बात समझते नहीं। प्रकाश इसे गोदी में ले जाओ और जो चीज़ माँगे उसे बाजार से दिलवा देना। जाओ भाई आशुतोष।

पर उसका मुँह फूला हुआ था। जैसे-तैसे बहुत समझाने पर वह प्रकाश के साथ चला। ऐसे चला मानो पैर उठाना उसे भारी हो रहा हो। आठ बरस का यह लड़का होने आया फिर भी देखो न कि किसी भी बात की उसमें समझ नहीं है। मुझे जो गुस्सा आया तो क्या बतलाऊँ। लेकिन यह याद करके कि गुस्से से बच्चे सम्भलने की जगह बिगड़ते हैं मैं अपने को दबाताा चला गया। खैर वह गया तो मैंने चैन की साँस ली।

लेकिन देखता क्या हूँ कि कुछ देर में प्रकाश लौट आया है।

मैंने पूछा क्यों?

बोला कि आशुतोष भाग आया है।

मैंने कहा कि अब वह कहाँ है?

"वह रूठा खड़ा है घर में नहीं आता।"

"जाओ पकड़कर तो लाओ।"

वह पकड़ा हुआ आया। मैंने कहा, "क्यों रे, तू शरारत से बाज नहीं आयगा? बोल, जाएगा कि नहीं?''

वह नहीं बोला तो मैंने कसकर उसे दो चाँटे दिये। थप्पड़ लगते ही वह एक दम चीखा पर फौरन चुप हो गया। वह वैसे ही मेरे सामने खड़ा रहा।

मैंने उसे देखकर मारे गुस्से से कहा कि ले जाओ इसे मेरे सामने से। जाकर कोठरी में बन्द कर दो। दुष्ट!

इस बार वह आध-एक घण्टे बन्द रहा। मुझे ख्याल आया कि मैं ठीक नहीं कर रहा हूँ, लेकिन जैसे कि दूसरा रास्ता न दीखता था। मार-पीटकर मन को ठिकाना देने की आदत पड़ गई थी, और कुछ अभ्यास न था।

खैर, मैंने इस बीच प्रकाश को कहा कि तुम दोनों पतंग वालों के पास जाओ। मालूम करना कि किसने पाजेब ली है। होशियारी से मालूम करना। मालूम होने पर सस्ती करना। मुरव्वत की जरूरत नहीं। समझे?

प्रकाश गया पर लौटने पर बताया कि किसी के पास पाजेब नहीं है।

सुनकर मैं झल्ला आया, कहा कि तुमसे कुछ काम नहीं हो सकता। जरा-सी बात नहीं हुई, तुमसे क्या उम्मीद रखी जाए?

वह अपनी सफाई देने लगा। मैंने कहा, "बस तुम जाओ।''

प्रकाश मेरा बहुत लिहाज मानता था। वह मुँह डालकर चला गया। कोठरी खुलवाने पर आशुतोष को फर्श पर सोता पाया। उसके चेहरे पर अब भी आँसू नहीं थे। सच पूछो तो मुझे उस समय बालक पर करुणा हुई। लेकिन आदमी में एक ही साथ जाने क्या-क्या विरोधी भाव उठते हैं।

मैंने उसे जगाया। वह हड़बड़ाकर उठा। मैंने कहा, "कहो, क्या हालत है?''

थोड़ी देर तक वह समझा ही नहीं। फिर शायद पिछला सिलसिला याद आया। झट उसके चेहरे पर वही जिद, अकड़ और प्रतिरोध के भाव दिखाई देने लगे।

मैंने कहा कि या तो राजी-राजी चले जाओ नहीं तो इस कोठरी में फिर बन्द किए देते हैं।

आशुतोष पर इसका विशेष प्रभाव पड़ा हो ऐसा नहीं मालूम हुआ।

खैर, उसे पकड़कर लाया और समझाने लगा। मैंने निकालकर उसे एक रुपया दिया और कहा, "बेटा, इसे पतंग वाले को देना और पाजेब माँग लेना। कोई घबराने की बात नहीं। तुम तो समझदार लड़के हो।"

उसने कहा कि जो पाजेब उसके पास नहीं हुई तो वह कहाँ से देगा?

"इसका क्या मतलब, तुमने कहा न कि पाँच आने में पाजेब दी है! न हो छुन्नू को भी साथ ले लेना। समझे?"

वह चुप हो गया। आखिर समझाने पर जाने को तैयार हुआ। मैंने प्रेमपूर्वक उसे प्रकाश के साथ जाने को कहा। उसका मुँह भारी देखकर डाँटने वाला ही था कि इतने में सामने उसकी बुआ दिखाई दी।

बुआ ने आशुतोष के सिर पर हाथ रखकर पूछा कि कहाँ जा रहे हो, मैं तो तुम्हारे लिए केले और मिठाई लाई हूँ।

आशुतोष का चेहरा रूठा ही रहा। मैंने बुआ से कहा कि उसे रोको मत,जाने दो।

आशुतोष रुकने को उद्यत था। वह चलने में आनाकानी दिखाने लगा।

बूआ ने पूछा, "क्या बात है?"

मैंने कहा, "कोई बात नहीं, जाने दो न उसे।"

पर आशुतोष मचलने पर आ गया था। मैंने डाँटकर कहा, "प्रकाश इसे ले क्यों नहीं जाते हो।"

बूआ ने कहा कि बात क्या है? क्या बात है?

मैंने पुकारा, "तू बंसी-भी साथ जा, बीच से लौटने न पाये।" सो मेरे आदेश पर दोनों आशुतोष को जबरदस्ती उठाकर सामने से ले गए।

बूआ ने कहा, "क्यों उसे सता रहे हो?"

मैंने कहा कि कुछ नहीं; जरा यो ही-

फिर मैं उनके साथ इधर उधर की बातें ले बैठा। राजनीति राष्ट्र की ही नहीं होती मुहल्ले में भी राजनीति होती है। यह भार स्त्रियों पर टिकता है। कहाँ क्या हुआ, क्या होना चाहिए

इत्यादि चर्चा स्त्रियों को लेकर रंग फैलाती है। इसी प्रकार की कुछ बातें हुई, फिर छोटा सा बक्सा सरका कर बोली, इसमें वह कागज हैं जो तुमने माँगे थे। और यहाँ

यह कहकर उन्होंने अपनी बास्कट की जेब में हाथ डालकर पाजेब निकालकर सामने की, जैसे सामने बिच्छू हो। मैं भयभीत भाव से कह उठा कि यह क्या?

बोली कि उस रोज भूल से यह एक पाजेब मेरे साथ ही चली गई थी।